‘भारतीय संविधान में अन्तर्निहित न्यायिक पुनर्विलोकन का सिद्धान्तः एक विश्लेषणात्मक अध्ययन’

शोध सारांश

पीएच०डी० उपाधि (विधि) हेतु प्रस्तुत

सत्रः 2023-24

शोध पर्यवेक्षक
डॉ मिथिलेश कुमार यादव

शोध छात्रा
शिखा वर्मा
पंजीयन सं०–IIMTU/21221697

विधि विभाग
आई०आई०एम०टी० विश्वविद्यालय
गंगा नगर, मेरठ, उत्तर प्रदेश

अनुसंधान प्रस्ताव का शीर्षक	**भारतीय संविधान में अन्तर्निहित न्यायिक पुनर्विलोकन का सिद्धान्तः एक विश्लेषणात्मक अध्ययन**
शोधार्थी का नाम	**शिखा वर्मा**
शोधार्थी का पंजीयन संख्या	**IIMTU/21221697**
पर्यवेक्षक का नाम और पदनाम	**डॉ0 मिथिलेश कुमार यादव** **असिस्टेन्ट प्रोफेसर** **कॉलेज आफ लॉ** **आई0आई0एम0टी0 विश्वविद्यालय, मेरठ।**
दिनांक	

शोध पर्यवेक्षक
डॉ0 मिथिलेश कुमार यादव

शोध छात्रा
शिखा वर्मा
पंजीयन सं0–IIMTU/21221697

घोषणा

मै शिखा वर्मा यह घोषणा करती हूँ कि प्रस्तुत शोध सारांश "**भारतीय संविधान में अन्तर्निहित न्यायिक पुनर्विलोकन का सिद्धान्त एक विश्लेशणात्मक अध्ययन**" डॉक्टर आफ फिलोसफी (विधि) की उपाधि हेतु शोध सारांश प्रस्तुत किया गया है।

मैं शिखा वर्मा यह घोषणा करती हूँ कि यह शोध सारांश मेरा मूल कार्य है तथा यह शोध सारांश किसी भी डिग्री डिप्लोमा एसोसिएटशिप या इसी तरह की अन्य उपाधियों के फेलोशिप के लिए आधार नही बनाया गया है। इसे किसी अन्य विश्वविद्यालय या संस्थान को किसी उपाधि या डिप्लोमा के उपाधि के लिए प्रस्तुत नही किया गया है।

स्थान–   शोध छात्रा का हस्ताक्षर

दिनांक–   शोध छात्रा का नाम
शिखा वर्मा

प्रस्तावाना:–

पृथ्वी पर जितने जीव है उसमें व्यक्ति एक अनूठा प्राणी है। एक ओर उसने अपने ज्ञान के सहारे सारे ब्रम्हमाण्ड के रहस्यों को जानने का प्रयत्न किया है तो दूसरी ओर स्वंय मानव भी मानव की ओर चिन्तन का विषय रहा है। यूनानी विद्वानों ने मानव और समाज की प्रकृति पर बहुत विचार किया। उन्होंने यह जानने का प्रयत्न किया कि मनुष्य की मूल प्रकृति क्या है–वह अच्छा है या बुरा सामाजिक दृष्टि से उत्तरदायित्व पूर्ण है या स्वार्थी, मानव में जो कुछ अंश है, उसमें से कितना जन्मजात है और कितना पर्यावरण की उपज, मानव व्यक्तित्व की व्यक्तिगत विशेषताऐं क्या है तथा वे कौन सी सामान्य विशेषताऐं है जो केवल मानव में पायी जाती है और प्राणियों में नही, आदि।

मानव विकास इस बात का साक्षी रहा है कि जब किसी व्यक्ति को असीमित शाक्ति मिल जाती है तो वह भ्रष्ट हो जाता है और उसके प्रयोग से समाज में अत्याचार, अराकजता और दुर्व्यस्था उत्पन्न हो जाती है इसी अवलोकन में अरस्तू ने कहा है कि, "सामाज द्वारा सुसंस्कृत व्यक्ति सब प्राणियों में श्रेष्ठतम होता है परन्तु जब यह बिना विधि तथा न्याय के जीवन पर व्यतीत करता है तब यह सबसे भंयकर बन जाता है।" मनुष्य की इस शक्ति को सीमित करने के लिए सर्वदा से प्रयास किया जा रहा है और इसी उद्देश्य से संकल्पनाओं की स्थापना की जाती

है जो इस शक्ति के दुरुपयोग पर अंकुश लगा सके, जिससे समाज में अत्याचार, अराजकता और दुर्व्यवस्था को उत्पन्न होने से रोका जा सके।

राजनीतिक व्यवस्था का अभिप्राय मात्र संविधान में है, अपितु संविधान के आधार पर राजनीतिक व्यवस्था विशेष रुप से सरकारी तन्त्र का ढाँचा तैयार होता है तथा राजनीतिक व्यवस्था का उद्‌देश्य समझकर दिशा निश्चित की जाती है। किसी देश की राजनीतिक, एतिहासिक, सामाजिक, आर्थिक परिस्थितियों के परस्पर समन्वय एवं संघर्ष से बनते बिगड़ते मूल्यों से राज–व्यवस्था का निर्माण होता है। अतः राजनीतिक व्यवस्था, औपचारिक और संवैधानिक ढ़ाँचे तथा औपचारिक ढ़ाँचे से मिलकर बनी व्यवस्था से है।

भारतीय राजनीतिक व्यवस्था का स्वरुप भारतीय संविधान द्वारा प्रदत्त संवैधानिक ढ़ाँचे तथा यहाँ की एतिहासिक, राजनीतिक, सामाजिक तथा आर्थिक परिस्थितियाँ एवं संविधान निर्माण के समय प्रस्तुत उद्‌देश्य प्रस्ताव के समन्वय से बना है।

भारतीय लोकतन्त्र में लिखित संविधान की व्याख्या, केन्द्र और राज्यों के बीच समन्वय तथा मौलिक अधिकारों की रक्षा के निमित्त एक स्वतन्त्र न्यायपालिका का गठन किया गया है। विदित है उस दृष्टि से न्यायपालिका की भूमिका भारत में न्याय करने से लेकर मौलिक अधिकारों की रक्षा और सरकार के विभिन्न अंगो को अपने निर्धारित क्षेत्राधिकार में रहने के लिए निर्देशित करने तक विस्तृत है। अर्थात

भारत में न्यायपालिका न सिर्फ संविधान की रक्षा करता है बल्कि किसी भी सरकार अथवा शक्ति द्वारा उसका उल्लंघन किए जाने से भी बचाता है।

भारतीय संविधान का एक महत्वपूर्ण लक्षण यह है कि उसने विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका के बींच शक्तियों के विभाजन की व्यवस्था दी है। शक्तियों का यह विभाजन स्पष्ट कर देता है कि संविधान का उद्देश्य किसी को भी असीमित अधिकार और शक्ति प्रदान करना नहीं है। चूंकि शक्तियों की सीमाबद्धता का निर्धारण ये संस्थाए स्वंय नही कर सकती, इसलिए शासन की प्रक्रिया में इन शक्तियों के टकराव के फलस्वरुप उठने वाले विवादों के समाधान के लिए एक निष्पक्ष संस्था की भूमिका महत्वपूर्ण है। केन्द्रीय विधानमण्डल, राज्यों की विधान सभाएं या केन्द्र और राज्य की कार्यपालिका पर प्रश्न खड़ा किया जाता है। अतः न्यायपालिका को संविधान की व्याख्या का दायित्व सौंपा गया है और इस प्रकार वह संविधान की रक्षा करता है।

न्यायिक पुनविलोकन की व्यवस्था भारतीय लोकतन्त्र के लिए अत्याधिक हितकारी है। संविधान के द्वारा संघ और राज्य सरकारों के बीच जो शक्ति विभाजन किया गया है, न्यायिक पुनविलोकन के आधार पर ही उसकी रक्षा सम्भव है। शासन की शाक्ति पर अंकुश रखने तथा नागरिक अधिकारों व स्वतंत्रताओं की रक्षा करने का कार्य भी न्यायिक पुनर्विलोकन के आधार पर ही किया जा सकता है। न्यायिक पुनर्विलोकन की व्यवस्था संविधान के संतुलन का कार्य कारती है और न्यायिक

पुनर्विलोकन के आधार पर ही सर्वोच्च न्यायालय तथा संविधान के अधिकारी व्यवस्था व्याख्याता तथा रक्षक के रुप में कार्य कर सकते है।

न्यायिक पुनर्विलोकन प्रो0 कारबिन के अनुसार, "न्यायिक पुनर्विलोकन की शक्ति न्यायालयों की वह शक्ति है जिसके अन्तर्गत विधानमण्डल द्वारा पारित अधिनियमों की संवैधानिक जाँच करते है। वे किसी ऐसी विधि को प्रवर्तित करने से इन्कार कर सकते है जो संविधान के प्रावधानों से असंगत है। यह कार्य न्यायालयों की साधारण अधिकारिता के अन्तर्गत आता है।" न्यायिक पुनर्विलोकन का सिद्धान्त सर्वप्रथम अमेरिका में यह सिद्धान्त महत्वपूर्ण वाद **मारवारी बनाम मेडिसन** में मुख्य न्यायधीष **मार्शल** द्वारा प्रतिपादित किया गया था। इस वाद में न्यायालय का निर्णय सुनाते हुए मार्शल ने कहा था कि संविधान देश की सर्वोच्च विधि होता है। इसके अन्दर परिवर्तन एक विशेष प्रक्रिया द्वारा ही किया जा सकता है। यदि विधानमण्डल द्वारा निर्मित विधियां संविधान के उपबन्धो से अंसगत है तो न्यायालय उन विधियों को अवैध घोषित कर सकता है। न्यायालय की यह शक्ति ही न्यायिक पुनर्विलोकन की शक्ति है।

भारतीय संविधान का अनुच्छेद 13 राज्य के नागरिको के विरुद्ध मौलिक अधिकारों के संरक्षण की गारन्टी देता है। यदि राज्य द्वारा कोई ऐसी विधि बनाई जाती है जो मौलिक अधिकारों का उल्लंघन करती है तो न्यायालय उसको शून्य

घोषित कर सकता है। इसके द्वारा न्यायालय विधियों की संवैधानिकता की जांच करता है। इसलिए अनुच्छेद 13 को 'मौलिक अधिकारों का प्रहरी' भी कहा जाता है।

अनुच्छेद 13(1):– इसमें कहा गया है कि भारतीय संविधान के लागू होने के ठीक पहले भारत में प्रचलित सभी विधियाँ उस मात्रा तक शून्य होगी जहाँ तक वे संविधान भाग तीन के उपबन्ध से असंगत है।

अनुच्छेद 13(2):–राज्य ऐसी कोई विधि नही बनायेगा जो मूल अधिकारों को छीनता है इस खण्ड के उल्लंधन में बनाई गई प्रत्येक विधि उल्लंधन की मात्रा तक शून्य होगी।

अनुच्छेद 13(3):–विधि के अन्तर्गत भारत में विधि के समान कोई अध्यादेश, आदेश, उपविधि, नियम, उपनियम, अधिसूचना, रुढ़िवाद प्रथा आते है अर्थात इनमें से किसी के भी द्वारा मूल अधिकारों का उल्लंघन होता है तो उन्हे न्यायालय में रिट के द्वारा चुनौती दी जा सकती है।

अनुच्छेद 13(4):– यह खण्ड संविधान के 24 वें संशोधन द्वारा जोड़ा गया है। इसके अनुसार इस अनुच्छेद की कोई बात अनुच्छेद 368 के अधीन किए गये संविधान संशोधन को लागू नही होगी।

यह अनुच्छेद सरकार के तीनों अंगो विधायिका, कार्यपालिका तथा न्यायपालिका को अपनी हद में रहने को बाध्य करता है ताकि यह एक दूसरे के क्षेत्र में हस्तक्षेप न करें।

संविधान में अनुच्छेद 13, 32, 132, 133 व 226 के द्वारा उच्चतम न्यायालय एवं उच्च न्यायालयों को न्यायिक पुनर्विलोकन की शक्ति दी गयी है। कुछ प्रावधानों को न्यायिक पुनर्विलोकन से बाहर रखा गया है।

ए0 के0 गोपालन बनाम् मद्रास राज्य AIR 1950 एस0सी0 27– इस मामले मुख्य न्यायधीश श्री कानिया ने कहा है कि "संविधान निर्माताओं ने तो केवल चेतावनी के रुप में अनुच्छेद 13 में न्यायिक पुनर्विलोकन से सम्बन्धित उपबन्धों का समावेश किया है अन्यथा इसकी अनुपस्थिति में भी न्यायालयों को ऐसी शक्ति सहज रुप से प्राप्त है। कोई अधिनियम संवैधानिक है या नहीं, इस प्रश्न के निर्णय करने की शक्ति न्यायालयों को ही है।"

मद्रास राज्य बनाम् वी0जी0राव0 1952 एस0सी0इस मामले में मुख्य न्यायधीश पातंजलि शास्त्री ने कहा है कि "हमारे संविधान में न्यायिक पुनर्विलोकन से सम्बन्धित स्पष्ट उपबन्ध दिये गये है, जो संविधान के अनुकूल है।"

केशवानन्द भारती बनाम् केरल राज्य, 1973 एस0सी0 1461 इस वाद में न्यायाधिपति श्री खन्ना ने न्यायिक पुनर्विलोकन के विषय में कहा है कि न्यायिक पुनर्विलोकन हमारी संविधानिक पद्वति का एक अभिन्न अंग बन गया है।

फर्टिलाइजर कारपोरेशन कामगार एवं बनाम् भारत संघ 1981 एस0सी0सी0 568– इस मामले में यह धारित किया गया कि अनुच्छेद 32 के अधीन उच्चतम न्यायालय की अधिकारिता संविधान का आधारभूत ढाँचा है। अतः इसे अनुच्छेद 368 के अधीन संशोधन करके नष्ट नहीं किया जा सकता है।

एल0 चन्द्र कुमार बनाम भारत संघ 1993 एस0सी01125–इस वाद में उच्चतम न्यायालय ने यह अवधारित किया है कि अनुच्छेद 32 तथा 226 के अन्तगर्त न्यायिक पुनर्विलोकन की शक्ति संविधान का आधारभूत ढ़ाँचा है तथा उसे अनुच्छेद 368 के अन्तर्गत संविधान द्वारा भी नष्ट नहीं किया जा सकता है।

अतः संविधान द्वारा न्यायपालिका को प्रदत्त यह शाक्ति विधायिका के हाथ की कठपुतली बन जायेगा। भारतीय संविधान में अन्तर्निहित न्यायिक पुनर्विलोकन का सिद्धान्त निश्चित रुप से संविधान की एक विशिष्ट विशेषता है, जिसका प्रयोग न्यायालय भारत की जनता के अधिकारों, सुख–शांति व कल्याणकारी राज्य की स्थापना में महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

न्यायिक पुनर्विलोकन का सिद्धान्त बहुत वृहद है, यह व्यवस्था भारतीय लोकतन्त्र के लिए बहुत अधिक आवश्यक और भारत की राजव्यवस्था के लिए अत्याधिक हितकारी है। शासन की शक्ति पर अंकुश रखने तथा नागरिक अधिकारों व स्वतन्त्राओं की रक्षा करने का कार्य भी न्यायिक पुनर्विलोकन के आधार पर ही किया जा सकता है। किन्तु वर्तमान में भारतीय लोक तन्त्र में इस सिद्धान्त को

लेकर प्रश्न चिन्ह और अलोचना मिली है शासन और न्यायपालिका में टकराव देखने को मिला है।

इस पृष्ठभूमि के आलोक में शोधकर्ता उक्त सिद्धान्त का सरकार और शासन द्वारा मिली चुनौती का गहन अध्ययन करने का प्रयास करेगी तथा साथ ही प्रावधानों का आलोचनात्मक विष्लेशण करने और विशेष रुप से इस सिद्धान्त की प्रभावकारिता भारतीय संविधान की सर्वोच्चता और संरक्षा के लिए क्या कदम उठाया जाना चाहिए इस पर सुझाव देने का प्रयास करेगी।

<u>1.2 शोध समस्या के अनुसन्धान का उद्देश्यः–</u>इस शोध का मूल उद्देश्य भारतीय संविधान में अन्तर्निहित न्यायिक पुनर्विलोकन के सिद्धान्त का विश्लेषणात्मक अध्ययन करना है। वर्तमान समय में इस सिद्धान्त को मिल रही चुनौती सरकार और न्यायपालिका में हो रहे अर्न्तविरोध का अवलोकन तथा इस सिद्धान्त की परिसीमा स्पष्ट करना है। न्यायिक पुनर्विलोकन के सम्बन्ध में न्यायपालिका के दृष्टिकोण का विश्लेषण करना है साथ ही इस सिद्धान्त के सन्दर्भ में सरकार का दृष्टिकोण क्या है इसका अध्ययन करना है।

<u>1.3 शोध समस्या का महत्वः–</u>वर्तमान शोध प्रबन्ध भारतीय संविधान में अन्तर्निहित न्यायिक पुनर्विलोकन के सिद्धान्त का विश्लेषणात्मक अध्ययन वर्तमान परिप्रेक्ष्य को दृष्टिगत रखते हुए संविधान की सर्वोच्चता के सन्दर्भ में न्यायिक पुनर्विलोकन की अवधारणा तथा भारतीय न्यायपालिका का दृष्टिकोण, न्यायिक पुनर्विलोकन की

शक्ति द्वारा न्यापालिका, विधायिका पर नियन्त्रण रखती है संविधान की सर्वोच्चता और अभिरक्षा करती है। इस शोध प्रबन्ध में व्यवस्थित रुप से गहन अध्ययन कर मूल्यांकन करने का प्रयास किया गया है। इस प्रयास में शोध छात्रा द्वारा अध्ययन हेतु सैद्धान्तिक (डाक्ट्रिनल) एवं विश्लेषणात्मक (ऐनालेटिक) शोध प्रणाली को अपनाया गया है। जिसके अर्न्तगत न्यायिक पुनर्विलोकन के सिद्धान्त के विषय में तथा संविधान में किये गये संशोधन का अध्ययन करके, उच्चतम न्यायालय एवं उच्च न्यायालयों के उन महत्तवपूर्ण निर्णयों में प्रतिपादित सिद्धान्तों एवं दिये गये निर्देशों का विश्लेषणात्मक अध्ययन कर मूल्यांकन करने का प्रयास किया गया है।

1.4 साहित्य का पुनर्विलोकनः–भारतीय संविधान में अन्तर्निहित न्यायिक पुनर्विलोकन का सिद्धान्त के विषय में न्यायधीशों, न्यायविदो, अधिवक्ताओं, संविधान विशेषज्ञों, मानवाधिकार संगठनो एवं प्रबुद्ध नागरिकों को हमेशा आकृष्ट करता रहा है। अतः यह स्वाभाविक है कि इस विषय पर कई ग्रन्थ एवं शोध लेख प्रकाशित हुए है। जहाँ न्यायिक पुनर्विलोकन की अवधारणा से सम्बन्धित विषय अधिकाश प्रकाशित ग्रन्थ या तो टीकाओ या पाठ्य पुस्तकों के रुप में है वही शोध पत्रिका में प्रकाशित लेख अपने सीमित विषय वस्तु के कारण विषय के व्यापकता को देखते हुए बहुमूल्य होते हुए भी सीमित प्रासंगिकता के है। विधि का निरन्तर अध्ययन उसका आलोचनात्मक परीक्षण एवं विश्लेषण तथा समय–समय पर उसकी समीक्षा विधि सुधार का प्रथम सोपान है इसलिए न्यायिक पुनर्विलोकन के सिद्धान्त की समीक्षा

इसकी उपयोगिता, प्रभावकारिता एवं प्रासंगिकता के लिए परम आवश्यक है। प्रस्तुत शोध ग्रन्थ इस उद्देश्य की पूर्ति करने की दिशा में एक उल्लेखनीय प्रयास है। इसका आशय यह है कि भारतीय संविधान में अन्तर्निहित न्यायिक पुनर्विलोकन के सिद्धान्त से सम्बन्धित प्रावधान, निर्णय और इससे जुड़े महत्वपूर्ण बिन्दुओ की सहायता से स्पष्ट करने का प्रयास मात्र है, जिससे शोध प्रबन्ध की सामान्य परिकल्पनाओं के अन्तर्गत ईमानदारी एवं निष्ठा के साथ किया गया है।

1.5 अध्ययन का विषय–क्षेत्रः–इस अध्ययन का क्षेत्र भारतीय संविधान में अन्तर्निहित न्यायिक पुनर्विलोकन के सिद्धान्त की अवधारणा व इसका विकास कैसे हुआ। इसके अतिरिक्त न्यायपालिका द्वारा इस शक्ति का प्रयोग कर संविधान की सर्वोच्चता और अभिरक्षा करने का प्रयास करना है। भारतीय संविधान में न्यायालय द्वारा प्रतिपादित ढ़ाँचे को बनाये रखने के उपायों तक सीमित है।

1.6 परिकल्पनायेंः–

1. न्यायिक पुनर्विलोकन की अवधारणा का विकास कैसे हुआ।
2. भारतीय संविधान में अन्तर्निहित न्यायिक पुनर्विलोकन से सम्बन्धित प्रावधान।
3. कतिपय अधिनियमों की व्यावृत्ति विशेष रुप से नवीं अनुसूची के सन्दर्भ में।
4. राज्य के नीति निर्देशक सिद्धान्त तथा मूल अधिकार और न्यायिक पुनर्विलोकन।
5. न्यायिक पुनर्विलोकन की परिसीमा अभिनिश्चित करना।

6. न्यायिक पुनर्विलोकन का सिद्धान्त संवैधानिक मूल्यों की रक्षा करता है।

1.7 शोध अध्ययन की पद्धतिः–

इस शोध प्रबन्ध में भारतीय संविधान में अन्तर्निहित न्यायिक पुनर्विलोकन के सिद्धान्त से सम्बन्धित प्रावधानों का एक विश्लेषणात्मक अध्ययन है। इसलिए अपनायी जाने वाली कार्यप्रणाली सैद्धान्तिक और अनुभवजन्य प्रकृति की है। अध्ययन सभी उपबन्धों का संरचनात्मक तरीके से विश्लेषण किया जाना और न्यायपालिका द्वारा इस शक्ति का प्रयोग कर संविधान की सर्वोच्चता संरक्षा करने के दृष्टिकोण और निर्णयों की चर्चा की गयी है। उसके बाद विधिक परिस्थितियों के आलोक में इस सिद्धान्त की प्रभावशीलता, कमियाँ और परिसीमाओं का विस्तृत विश्लेषण के आधार पर इस विषय पर उचित सुझाव दिया गया है।

1.8 शोध प्रबन्ध की रुप रेखाः–

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध भारतीय संविधान में अन्तर्निहित न्यायिक पुनर्विलोकन के सिद्धान्त का एक विश्लेषणात्मक अध्ययन है। यह शोध प्रबन्ध निम्न अध्याय में विभाजित है।

1. प्रस्तावना
2. न्यायिक पुनर्विलोकन के अर्थ एवं अवधारणा
3. भारतीय संविधान एवं न्यायिक पुनर्विलोकन
4. नवीं अनुसूची एवं न्यायिक पुनर्विलोकन

5. न्यायिक पुनर्विलोकन के सन्दर्भ में न्यायलय की भूमिका

6. निष्कर्ष एवं सुझाव

संदर्भ ग्रंथ सूची (References/Bibliography)

पाठ्य पुस्तकें:–

1. डा0 उपाध्याय जय जय जय – भारत का संविधान, सेन्ट्रल ला एजेन्सी 1999, संस्करण, 30 डी/1 मोतीलाल नेहरु रोड़ इलाहाबाद–2
2. डा0 चतुर्वेदी, मुरलीधर – भारत का संविधान, चौदहवा संस्करण 2014 इलाहाबाद ला एजेन्सी पब्लिकेशन।
3. डा0 जैन एम0पी0 – इण्डियन कांन्स्टीट्यूशनल ला, 2014 दशम संस्करण, बाधवा एण्ड कम्पनी, नागपुर।
4. डा0 जैन पुखराज – आधुनिक शासन व्यवस्थायें, 2000 संस्करण, सहित्य भवन पब्लिकेशन्स, हास्पिटल रोड़ आगरा–282003
5. डा0 जैन, पुष्पराज एवं डा0 फाड़िया बी0एल0 – भारतीय शासन एवं राजनीति, नवां संस्करण, साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, हास्पिटल रोड़ आगरा–286001
6. डा0 प्रसाद, अनिरुद्ध – विधिषास्त्र के मूल्य सिद्धान्त, द्वितीय संस्करण 2017 इर्स्टन बुक कम्पनी लखनऊ 34, लाल बाग लखनऊ–226001

7. डा0 पाण्डेय, जे0एन0 – भारत का संविधान 2017 संस्करण, सेन्ट्रल ला एजेन्सी, 30 डी0/1 मोती लाल नेहरु रोड़ इलाहाबाद।
8. डा0 बसु, दुर्गादास – भारत का संविधान एक परिचय 2014 संस्करण, प्रटिस हाल ऑफ इण्डिया प्रा0 लि0 नई दिल्ली।
9. डा0 शुक्ला वी0 एन0 – कांस्टीट्युशन ऑफ इंडिया, चौदहवां संस्करण 2014, ईस्टर्न बुक कम्पनी लखनऊ 34, लाल बाग, लखनऊ–226001

<u>संदर्भित समाचार पत्र एवं पत्रिका की सूचीः–</u>

- दैनिक जागरण
- हिन्दुस्तान
- अमर उजाला
- इण्डिया टुडे
- द टाइम्स आफ इण्डिया
- द हिन्दू
- नवभारत टाइम्स
- पाइनियर
- क्रानिकल
- प्रतियोगिता दर्पण

- जजमेंट लॉ टुडे
- पॉलटिकल एण्ड लॉ टाइम्स

<u>संदर्भित जर्नलों की सूचीः–</u>

- आल इण्डिया रिपोर्ट
- इलाहाबाद लॉ जर्नल
- उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका
- क्रिमिनल लॉ जर्नल
- लॉ टाइम्स
- लॉ रिपोर्टस इण्डिया अपील (प्रिवी कौंसिल)
- लॉ रिपोर्टस (किंग्स बेच)
- सुप्रीम कोर्ट केसेस
- सुप्रीम कोर्ट जर्नल
- मद्रास लॉ जर्नल
- जजमेंट एवं लॉ टुडे

<u>संदर्भित वेबसाइटों की सूचीः–</u>

- डब्लू0डब्ल0ूडब्लू0 डाट गुगल डाट काम
- डब्लू0डब्ल0ूडब्लू0 डाट जे0एस0डाट एन0एस0डब्लू डाट आर्ग डाट इन
- डब्लू0डब्ल0ूडब्लू0 डाट लीगल सर्विस इण्डिया डाट काम
- डब्लू0डब्ल0ूडब्लू0 डाट मनुपात्रा डाट काम
- डब्लू0डब्ल0ूडब्लू0 डाट लाइव लॉ डाट इन